धर्म जीवन

जून 2007

देवात्मा फरमाते हैं।

विशुद्ध परोपकारी और स्वार्थ। परायण मनुष्यों के जीवन में अन्तर

देव ज्योति में ही हमें अपनी उल्टी दृष्टि का बोध होता है।

मधुर स्मृतियाँ–1

धार्मिक दंगे

प्रतियोगी नहीं पूरक हैं।

जीवन प्रसंग

पाठकों के विचार

देवात्मा फरमाते हैं।

भगवान ने फरमाया - धतूरे के वृक्ष से पत्ते तोड़ देने से वह वृक्ष धतूरे का ही रहता है, आम का वृक्ष नहीं बन जाता। इसी तरह पाप छोड़ देने से क्या होगा? फर्ज करो कि एक मनुष्य धन अनुराग से परिचालित होकर चोरी करता था, उसने चोरी छोड़ दी, रिश्वत छोड़ दी। पहले ली हुई रिश्वत भी वापिस कर दी। यह सब छूट गया, और कुछ भलाई भी आई। मगर धन कर प्यार वही रहता है। वह धतूरा ही रहा। (यह अच्छा है कि कोई देता है, लेकिन नीच भावों से मोक्ष और उच्च भावों का विकास भी होना चाहिए)।

एक - एक जन ने मांस खाना छोड़ दिया, मगर स्वाद अनुराग वैसा का वैसा ही रहा। वह उसका गुलाम रहा। लड़कियों का बध होना तो रुक गया, उनकी पालना भी होने लगी मगर सन्तान अनुराग की गुलामी वैसी ही रही। अब जो खुद गुलाम हैं, वह दूसरों को गुलामी से कैसे निकाल सकते हैं, पापों को छोड़ देने से तो केवल अधर्म में कमी आती है। धर्म राज्य में प्रवेश कहां हुआ है?

घमण्ड सुख अनुराग से परिचालित होकर एक - एक जन समझता है कि मैं बड़ा हूँ, बढ़िया हूँ। मैं किसी के सामने घटिया नजर न आऊं। ऐसा जन हर वक्त झूठ में रहता है। अगर कोई उसको झूठमूठ भी बढ़िया कहे, तो भी खुश होगा। स्वार्थी मनुष्य चाहता है कि मैं किसी के काम न आऊं। अभागा है वह मुल्क जिसके लोग खुदगर्ज हैं। खुदगर्ज इन्सान अपने उपकारियों के भी काम आना नहीं चाहता। स्वेच्छाचारी कहता है कि मेरा जैसा जी चाहेगा मैं वैसा करूंगा। प्रशंसा सुख अनुरागी की यह ख्वाहिश रहती है कि हर समय प्रशंसा हो। अगर इस प्रकार के नीच अनुराग तुम में मौजूद हैं, और उनकी गुलामी है, तो तुम धर्म जगत में प्रवेश करने के काबिल नहीं हुए। इन सुखों के जब तक अनुराग मौजूद हैं, तब तक एक तो मनुष्य मिथ्या में रहता है, क्योंकि वह एक या दूसरे प्रकार के सुख को अपना लक्ष्य रखता है, जब कि किसी प्रकार का भी सुख मनुष्य का लक्ष्य नहीं है। दूसरे नीच सुख अनुरागों से अहित की उत्पत्ति होती है। फिर एक - एक नीच अनुराग की अलग - अलग नीच घृणाएं हैं। जहां कोई तुम्हारे नीच अनुराग में रूकावट पैदा करेगा, तो झट तुम उससे दूर हो जाओगे।

उसके पास जाने को जी नहीं करेगा। उसकी शक्ल देखने को दिल नहीं करेगा। उसके लेखों को पढ़ने को दिल नहीं करेगा। भगवान ने श्रीमान देवत्व सिंह जी की मिसाल दी कि उनके जीवन में एक समय ऐसा आया कि वह ऐसी तहरीरों को परे फैंक देते थे कि जिनमें उनकी किसी बुराई को प्रगट किया गया हो। कहते थे कि मेरी तस्वीर है तो बुरी; मगर उसको बुरा न दिखाओ। मोक्ष की जरूरत नहीं महसूस करते थे। वह मेरे पास आने से कतराते थे। मीटिंग में आ बैठते थे, मगर यूं नजदीक न आते थे।

धर्म जीवन

खण्ड 19 अंक 6
जून 2007
वार्षिक मूल्य 50 रूपये

सम्पादक
डा. विनोद खेड़ा

सह सम्पादिका
सुरजीत बराड़

विशुद्ध परोपकारी और स्वार्थपरायण मनुष्यों के जीवन में अन्तर

जैसे विष या मिट्टी खाने से मनुष्य का शारीरिक स्वास्थ्य बिगड़ता है और दूध, फल आदि के ठीक सेवन से वह बेहतर बनता है, वैसे ही स्वार्थपरता का जीवन व्यतीत करने से मनुष्य का आत्मिक जीवन बिगड़ता और नष्ट होता है और विविध संबंधों में कई प्रकार से निष्काम सेवाकारी बनने से उसका जीवन उसकी अपनी योग्यता के अनुसार बेहतर बनता और उन्नत होता है। इस विषय में भगवान देवआत्मा के दो वचन नीचे दिए जाते हैं -

नेचर का यह अटल नियम है कि जो मनुष्य स्वार्थी या स्वार्थपरायण होते हैं, वह नेचर के विकास के अटल नियम के अनुसार दिनों - दिन आत्मिक पतन की ओर जाते हैं।

तुम इस तत्व को अच्छी तरह जानो और पहचानो कि तुम्हारे आत्मा की रक्षा और उन्नति औरों की निष्काम भलाई पर निर्भर करती है।

उपरोक्त दोनों वचन बहुत अच्छी तरह इस सच्चाई को प्रगट करते हैं कि मनुष्य के लिए स्वार्थपरता का जीवन पतनकारी और विनाशकारी है और निष्काम भलाई का जीवन विकासकारी और कल्याणकारी है।

क्या भौतिक जगत, क्या उद्भिद् जगत, क्या पशु जगत और क्या मनुष्य जगत के घटिया और बढ़िया दर्जे के अस्तित्व अपने - अपने रूप और अपने - अपने फलों से उपरोक्त सच्चाईयों को डंके की चोट से प्रगट कर रहे हैं?

नेचर में स्वार्थी और विशुद्ध परोपकारी जनों के जीवन में जो अलग - अलग प्रकार के कई लक्षण या फल पैदा होते हैं, उनमें से कुछ लक्षण या फल नीचे दिए जाते हैं।

(1) प्रत्येक मनुष्य स्वभावत: सुख का प्रबल आकांक्षी है और दुख से घबराता है। परन्तु स्वार्थ परायण मनुष्य के लिए बहुत बड़ी कठिनाई यह है कि वह अपने किसी सेवा के बदले जो सुख चाहता है, उसके बदले वह धन, मान, इज्जत व पद आदि की आकांक्षा करता है, वह सब कुछ औरों के हाथ में है। उसकी खुशी का सामान अधिकतर उसके अपने अस्तित्व से बाहर के सामानों और बाहर के अस्तित्वों में है और उसका वह सुख उनके चले जाने, पत्नी या संतान के मर जाने, किसी पद के छिन जाने, किसी की ओर से अपमानित होने से नष्ट हो जाता है। परन्तु इसके विरुद्ध जिस मनुष्य को दूसरों की निष्काम सेवा या भलाई में सुख

मिलता है, उसका सुख उसके बाहर के जनों के हाथ में नहीं है, बल्कि उसके अपने आत्मा के भीतर ही है। श्रद्धा, कृतज्ञता, दुख निवारण या अभाव निवारण आदि सात्विक भावों से परिचालित होकर जो जन किसी की भलाई करता है, उसके बदले में वह सुख लाभ करने के लिए किसी और अस्तित्व का मोहताज नहीं है, बल्कि उसके सुख का सामान उसके अपने अन्दर ही है। इसी प्रकार स्वार्थ परायण मनुष्य के दुख का सामान उसके अपने अन्दर है और निष्काम सेवाकारी मनुष्य के दुख का सामान अधिकतर और नीच आत्माओं के व्यवहार में है। जो स्वार्थ परायण मनुष्य ईर्ष्या या घमंड या मोह या क्रोध के कारण दुख पा रहा है, उसे कोई दूसरा मनुष्य चाहे कुछ भी तकलीफ न दे तो भी अपनी ऐसी बुरी प्रकृति के कारण अपने आप में स्वयं दुखी रहेगा और उस दुख से अपनी जीवनशक्ति का नाश करता रहेगा। वह अकेला होकर भी उच्च शांति लाभ नहीं कर सकेगा और इसके विरुद्ध जो जन निष्काम सेवाकारी है, वह स्थूल शरीर छोड़ने पर नीच आत्माओं की पहुंच से ऊपर चला जाएगा और इसलिए उनके बुरे बर्तावों के दुख से सुरक्षित हो जाएगा। ऐसी अवस्था में वह अपने उच्च भावों के कारण बहुत उच्च शांति कि अवस्था में रहेगा। स्वार्थ परायण मनुष्य के सुख का सामान अधिकतर औरों के हाथ में है और निष्काम सेवाकारी जन के सुख का सामान अधिकतर उसके अपने ही हाथ में है और दुख का सामान औरों के अन्दर है कि जिस दुख से वह समय आने पर नीच आत्माओं से जुदाई की हालत में अवश्य मोक्ष पा सकता है।

(2) प्रत्येक मनुष्य जीना चाहता है और मरना नहीं चाहता, परन्तु स्वार्थी मनुष्श नेचर के जीवन विषयक नियम के विरुद्ध जीने के कारण अपनी उक्त जीने की आकांक्षा को ठीक तरह पूरा नहीं कर सकता और वह स्वभाविक आयु से पहले ही इस दुनिया में या अगली दुनिया में मर जाता है। निष्काम सेवाकारी मनुष्य नेचर के जीवन विषयक नियम को पूरा करने के कारण अधिक से अधिक काल तक जीने के योग्य बन जाता है। ऐसा जन यदि किसी कारण से इस दुनिया में जल्दी अपने स्थूल शरीर को छोड़ने के लिए मजबूर हो तो उसके बाद सिवाय किसी विशेष दुर्घटना के उच्च प्रकार का सूक्ष्म शरीर लाभ करके चिरकाल तक जीने के योग्य बन जाता है।

(3) स्वार्थी मनुष्य के जीवन का दायरा बहुत तंग होता है और निष्काम सेवाकारी जन के जीवन का बहुत अधिक होता है। जो जन औरों को हानि पहुंचाकर जीना चाहता है, उसे जहां कहीं अपने से अधिक शक्तिशाली अस्तित्वों से वास्ता पड़े, वहां पर वह उसे खत्म कर डालेंगे और ऐसा अस्तित्व मरने के बाद किसी अच्छे लोक में नहीं जा सकेगा और उसके जीवन का क्षेत्र दिनों-दिन तंग होता जाएगा और आखिरकार वह इसी हालत में चलते-चलते बिना आई मौत का शिकार हो जाएगा। परन्तु इसके विरुद्ध जो मनुष्य निष्काम सेवाकारी होता है, उसके लिए क्या इस दुनिया में और क्या अगली दुनिया में सेवा के लिए जो क्षेत्र होता है, वह बहुत बड़ा और असीम होता है। संतान अनुरागी के लिए वह जन सीमित हैं कि जिनकी सेवा करके वह जीना चाहता है और उनके न रहने से उसकी सेवा और क्षेत्र का सामान समाप्त हो जाता है, परन्तु दूसरे की निष्काम उच्च सेवा करने के आकांक्षी जन के लिए ऐसे जन प्रत्येक स्थान पर वर्तमान हैं कि जिनकी सेवा करके वह जीता रह सकता है।

(4) स्वार्थी मनुष्य अपने आत्मिक जीवन के विचार से दिनों-दिन अधिक से अधिक रोगी, पागल, दुखिया और दुर्बल होता चला जाता है और

आखिरकार अपने व्यक्तिगत अस्तित्व के विचार से पूर्णत: खत्म हो जाता है। परन्तु परोपकारी जन दिनों - दिन अधिक से अधिक ज्योतिर्मान, सुन्दर और बलवान, इसलिए श्रेष्ठ सुखों का भागी होता चला जाता है और अधिक से अधिक देर तक जीने के योग्य हो जाता है।

(5) स्वार्थी मनुष्य मरने के बाद ऐसे जनों में जाकर रहने का अवसर पाता है कि जो उसकी तरह स्वार्थी होते हैं, इसलिए ऐसी अवस्था में वह जहां अपने नीच भावों की आग में जलता रहता है, वहां दूसरे नीच अस्तित्वों के भयानक बुरे व्यवहारों से भी कई प्रकार के अनुचित दुख पाता रहता है। निष्काम सेवाकारी जन मरने के बाद ऐसे मनुष्यों में जाकर वास करने का अधिकारी होता है कि जो परोपकारी होते हैं और इसलिए ऐसा मनुष्य अपने उच्च जीवन की अमूल्य बरकतों से मालामाल होता है, वहां औरों के श्रेष्ठ जीवन के उच्च व्यवहारों से भी बहुत बड़ा लाभ उठाता है।

(6) स्वार्थी मनुष्य इस दुनिया में एक ऐसा बुरा दृष्टांत छोड़ जाता है जो क्या उसके निकट के संबंधियों और क्या अन्य जनों की तबाही में सहायक होता है और परोपकारी जन ऐसा दृष्टांत छोड़ जाता है जो क्या उसके संबंधियों और क्या अन्य जनों की भलाई में सहायक बनता है और इस प्रकार स्वार्थी मनुष्य को मरने के बाद औरों की ओर से बुरी आशीष मिलती रहती है और परोपकारी जन को शुभ आशीष।

(7) स्वार्थी जैसे और किसी जन का सच्चा शुभचिंतक नहीं होता और नहीं हो सकता, वैसे ही अपना भी शुभचिंतक नहीं होता और नहीं हो सकता, किन्तु वह जैसे औरों का दुश्मन होता है, वैसे ही अपना भी शत्रु होता है, परन्तु इसके विरुद्ध निष्काम सेवाकारी जन जैसे औरों का भला चाहता है और करता है वैसे ही अपना भी भला चाहता और करता है। अनेक अवस्थाओं में वह अपने शत्रुओं के लिए भी हितकारी प्रमाणित होता है, जबकि इसके विरुद्ध स्वार्थी मनुष्य अनेक अवस्थाओं में अपने उपकारियों को भी हानि पहुंचाने से नहीं रुकता।

(8) जहां स्वार्थी मनुष्य को अपने मरने के समय कई प्रकार के अनुचित दुख उठाने पड़ते हैं और शोक से हाथ मलने पड़ते हैं, वहां परोपकारी जन को ऐसे दुख नहीं उठाने पड़ते बल्कि वह शांति के साथ इस अधम दुनिया को छोड़ कर किसी उच्च लोक में जाता है।

तब प्रिय पाठकगण, आप देखें कि स्वार्थी और विशुद्ध परोपकारी जनों के जीवनों के नतीजे में कितना ज़मीन - आसमान का अन्तर है। जो जन इस सच्चे अन्तर को भगवान देवआत्मा की ज्योति में देखने की योग्यता रखते हों, उनके लिए इस बात की नितांत आवश्यकता है कि वह यदि अभी तक स्वार्थपरता का जीवन व्यतीत करते हैं, तो वह शीघ्र स्वार्थपरायण अवस्था से उद्धार लाभ करें और विशुद्ध परोपकार अनुरागी बनने के लिए सच्चा फिकर और संग्राम करें और समय रहते - रहते परोपकार के जीवन की उच्च अवस्था को लाभ करके और भगवान देवात्मा के साथ उन्नतशील सम्बंध में बंध कर आत्मिक भलाई का मार्ग खोल सकें, वरना ठीक समय व्यतीत हो जाने पर उनकी कुछ पेश नहीं जाएगी और उनके लिए केवल अत्यन्त हानिकारक दुखों की आग में जल - जल कर खत्म होना बाकी रह जाएगा।

(सत्यदेव संवाद 11 जून 1940)

देव ज्योति में ही हमें अपनी उल्टी दृष्टि का बोध होता है।

मेरे भगवन्!

कुछ समय से मैं प्राय: प्रतिदिन अपने निज के साधन में 'मनुष्यात्मा के संबंध में चार महा तत्व' नामक अति मूल्यवान पुस्तक का पाठ करता रहा हूं। मैंने उस अध्याय का बार बार पाठ किया है जिसमें नीच अनुरागों और नीच घृणाओं से उत्पन्न महा भयानक फलों का वर्णन है। इनमें से एक है उल्टी दृष्टि। यह फल उतना ही सच है जितना ही यह भयानक है। इस प्रकार के कुछ तजरुबे मैं अपने और दूसरों के जीवनों से नीचे लिखता हूं-

1. माता के सम्बन्ध में उल्टी दृष्टि

मेरी बहुत छोटी सी आयु में मेरे पिता जी का देहांत हो गया था। मेरी माताजी ने हमें पालने में बहुत संग्राम किया। आपकी अद्वितीय रोशनी प्राप्त करने से पहले मेरे दिल में विषैला विचार उठता था। वह यह था कि जब मैं अपने कमाए हुए पैसों से उनकी सहायता करता, तो मैं यह समझा करता कि मैं अपनी माता पर एहसान कर रहा हूं। आपकी रोशनी में मैं अनुभव करता हूं कि यह भाव कितना गलत था। मैं माता के ऋण को अपनी तुच्छ सी सेवाओं से कैसे उतार सकता था? उन पर कोई मेहरबानी करने का तो प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। मुझे आपने एक भयानक उल्टी दृष्टि से बचा लिया।

जब मैं दसवीं कक्षा में पढ़ता था तो मेरी माननीय माता जी को किसी दूर के स्थान में एक भारी बंडल ले जाना था। उन्होंने मुझे ऐसा करने के लिए कहा। बंडल उनके लिए बहुत भारी था और हमें अन्य कोई सहायता प्राप्त नहीं थी, इसलिए वह मुझे ले जाना पड़ा। लेकिन सारा रास्ता मैं उनके प्रति कठोर शब्द बोलता रहा और बड़बड़ाता रहा। इसका कारण यह नहीं था कि मैं बंडल उठा नहीं सकता था। इसका कारण तो यह था कि मैं समझता था कि मैं ऐसा काम करके लोगों की नज़रों में छोटा बन जाऊंगा। यह मेरी शोचनीय उल्टी दृष्टि थी। आपकी रोशनी से वंचित होने के कारण मैं नहीं देख सका कि मेरी माता को मदद की जरूरत है, वह माता जिसने मेरी इतनी बड़ी सेवा की है। मैं इस धोखे में रहता था कि सारे संसार की आंखें मेरी ओर लगी हुई हैं, मानो दुनिया को अन्य कोई काम ही नहीं। और यह मान भी लिया जाए कि लोग मेरी कल्पना के अनुसार ही सोचते होंगे, तो भी मैं कोई पाप तो नहीं कर रहा था। हाय! मेरी कैसी भयानक अवस्था कि मैं नीच दुनियादारों की ओर से कुछ प्रशंसा के खोखले शब्द न मिलने के डर से अपनी माता की भी सहायता न करूं।

2. अध्यापकों के सम्बन्ध में उल्टी दृष्टि

जिस संगत में मैं रहता था, उसने मुझे यह सिखाया कि अध्यापकों का अपमान करना एक अच्छी बात है। जब मैं कालेज में गया, तो मुझे बताया गया कि कालेज का विद्यार्थी तो एक स्वतंत्र पक्षी है और उसे यह अधिकार है कि जो प्रोफेसर उसकी आज़ादी में दखल दे, उसे उसका मज़ा चखाए। मेरे भीतर यह विश्वास भरा गया कि जमात में प्रोफेसर की हंसी उड़ाना या उसकी पीठ पीछे उसका मखौल उड़ाना एक आज़ाद कालिजिएट की निशानी है। अपने दिनों में मैंने भी कुछ अध्यापकों का अपमान किया, उनकी आज्ञा के विरुद्ध हरकतें कीं और प्रोफेसरों का मखौल उड़ाने में दूसरों का

साथ दिया। अब यह सारी अवस्था मुझे एक भयानक उल्टी दृष्टि मालूम होती है।

आपकी देव ज्योति पाने के बाद कालेज में ही मेरा व्यवहार बदल गया। परन्तु बीते जीवन के दुखदाई धब्बे मेरी आत्मा पर वर्तमान हैं और मैं उन दिनों को याद करके रोता हूं जब मैं ऐसे विषाक्त प्रभावों से घिरा हुआ था। आपकी ही देव ज्योति में मुझे दिखाई दिया कि मेरे अध्यापक मेरे उपकारी थे। कालेज के दिनों में जब मुझे आपकी शरण मिल चुकी थी तो जिन अध्यापकों का मैंने अपमान किया था, उनमें एक वहां आए जहां मैं पढ़ता था। तब मैंने उनके सम्बन्ध में अपनी नीच गतियों का अपने उस समय की योग्यता के अनुसार यथा सामर्थ्य परिशोध किया। अध्यापक दंग रह गए और उन्होंने मुझसे पूछा कि तुम्हारे अन्दर यह आश्चर्यजनक परिवर्तन कैसे आ गया? मैंने उन्हें देव समाज के द्वारा अपने जीवन में आए परिवर्तन की कथा सुनाई।

3. आत्मिक उपकारी के संबंध में दुश्चिन्ताएं

जब मेरे अंहकार के नीच अनुराग पर चोट लगती है तो मेरी निगाह उल्टी हो जाती है। मुझे श्री भाई साहिब भाई मोहन देव जी के सम्बन्ध में एक घटना याद है। यह बम्बई की और १९०५ ई० की बात है, जबकि मैं कालेज के वातावरण से विषाक्त था। मैं क्षुद्र प्रकार की बातें करने लगा। उन्हें इससे दुख हुआ और तनिक कड़े शब्दों में मुझे समझाया। इस पर मैं उल्ट पुल्ट हो गया। कम से कम उस समय के लिए उनके सब उपकार मैं भूल गया और मैं उनके सम्बन्ध में दुश्चिन्ताएं करने लगा। कैसी भयानक उल्टी दृष्टि! वह मेरे महान उपकारियों में से एक थे, जिन्होंने मुझे उस समय समझाया जब मैं ग़लत जा रहा था, परन्तु मैंने उन्हें उस समय मेरे साथ बहुत बड़ा अन्याय करने वाला अनुभव किया।

4. अपने दोषों को मानने के सम्बन्ध में उल्टे विश्वास

जब मैं अपनी पुरानी बिरादरी और पुराने सम्बन्धियों और सोसाइटी के वातावरण में सांस लेता था, तो एक और विषैली धारणा मेरे दिल में प्रवेश कर गई थी, जिसने अब तक भी मेरे दिमाग से अपना अधिकार पूर्ण रूप से नहीं छोड़ा। वह उल्टी धारणा यह थी कि जो मनुष्य जीवन में सफल होना चाहता है, उसे अपने आप को दुनिया के सामने ठीक ठाक प्रगट करना चाहिए, चाहे उसके आत्मा को विनाश के कीड़े खा रहे हों। जीवन का मंत्र यह बना हुआ था, "जो मन में आए करो, परन्तु कानून की पकड़ में आने से सावधान रहो।" आपकी ज्योति में यह विश्वास कितना भयानक प्रतीत होता है। आपकी ज्योति दिखाती है कि चाहे मुझे कोई न भी देखे, तो भी मेरा आत्मा प्रत्येक नीच भाव, विचार और कार्य से नीच बनता है, और सोसाइटी में मुझे केवल उसी स्थान या पद की इच्छा करनी चाहिए जिसका मैं अधिकारी हूं। ऐसे मान यश की भूख नहीं रखनी चाहिए जिसका कि मैं अधिकारी नहीं।

उपरोक्त दूषित प्रभावों ने जो मैंने पुरानी सोसाइटी से प्राप्त किए, मुझे लम्बे काल तक अपने दोषों को देखने और देखने पर उन्हें मान लेने के अयोग्य बनाए रखा। उन्होंने मेरे भीतर झूठी प्रशंसा और बड़ाई की लालसा भी पैदा कर दी, चाहे मैं उसका अधिकारी न भी हूं। कैसी उल्टी दृष्टि।

5. झूठा दिखावा

मेरे प्रान्त के बहुत से विद्यार्थी जब कभी अपने प्रान्त से बाहर जाते, तो अमीरों की न्याई

ठाठ - बाठ से पहनते, खाना खाते और रहते - सहते, चाहे उस फिजूलखर्ची के कारण मां बाप को दुखी दिन और बेचैन रातें काटनी पड़तीं। हमारे रहन सहन को देखकर वहां के विद्यार्थियों पर यह प्रभाव पड़ता कि यह राजकुमार हैं। हम अपने आपको बहुत बड़ा प्रगट करते। हमारे प्रान्त के एक भद्र पुरुष, जो प्रान्त के मुख्य नगर में रहते थे, हमारी ऐसी दशा को देखकर बड़े दुखी और निराश हुए और उन्होंने हमारा असली रूप दिखाते हुए एक पत्र अंग्रेजी दैनिक अखबार को लिखा। झूठी और बनावटी पोज़ीशन बनाए रखने की हानियों से बचाने की उनकी कोशिश का धन्यवाद करने के स्थान पर मैंने और दूसरे विद्यार्थियों ने उन्हें बुरा - भला कहा और उन पर झूठे इलज़ाम लगाए।

आपकी ज्योति ने इस सम्बन्ध में मेरे दृष्टिकोण को बहुत बदल दिया है। और आपकी शक्ति से मैं किसी सीमा तक दूसरों के सामने अपने आपको झूठ मूठ बढ़िया दिखाने की आदत को छोड़ने के योग्य हो गया हूं।

एक दिन मैं ज़िला मैजिस्ट्रेट - जो देव समाज के सम्पर्क से प्राप्त उच्च चरित के कारण मेरा बड़ा मान करते थे - के सामने गया। उसने मुझे कहा कि तुम्हारी आय प्रति मास कम से कम एक हज़ार रुपए तो होगी। यह बात ठीक न थी। मैं आपके विकासकारी प्रभावों के अधीन आ चुका था, इसलिए मैं वहीं और उसी समय बताए बिना न रह सका कि ऐसा नहीं है। परन्तु जब मैंने अपनी आत्म - परीक्षा की तो मैंने देखा कि उसका ऊंचा अनुमान चाहे गलत था, परन्तु मुझे ऐसा सुनना सुखदायक लगा और उसे गलत बताने के लिए मुझे ज़ोर लगाना पड़ा। मेरे सामने एक भारी सचाई प्रगट हुई। एक बात बिल्कुल झूठी थी, इसने मुझे खुश किया, क्योंकि उससे मेरे प्रशंसा अनुराग की तृप्ति हुई। और जब मैंने इसे ठीक किया और मैं सचाई पर चल रहा था, तो मुझे इसके लिए दिल पर ज़ोर देना पड़ा। कैसी उल्टी दृष्टि!

6. जीवन के लक्ष्य के विषय में उल्टी दृष्टि

उल्टी दृष्टि की सबसे भयानक अवस्था जो मुझे आपकी रोशनी में दिखाई देती है, वह यह है कि मनुष्य गौण या साधन मात्र बनने वाली वस्तुओं को मुख्य वस्तु समझे और उन्हीं को अपने जीवन का लक्ष्य माने। आपकी ज्योति इस बात को स्पष्ट रूप से दिखाती है, कि धन तभी लाभदायक हो सकता है जब हम इसे भलाई और विकास में सहायक बना सकें। अन्यथा यदि हम उसे ही अपना लक्ष्य समझकर उसके पीछे दौड़ेंगे, तो यह हमें अपना दास बना लेगा और हमारा पतन करेगा। मेरे सन्मुख अनेक मनुष्यों के - कुछ देव समाज के सभासदों के भी - दृष्टान्त हैं जो आपकी ज्योति से वंचित हैं और जो धन को केवल धन के लिए प्यार करते और कीमती समझते हैं। उन्हें इसकी प्राप्ति से वही सुख मिलता है, जो एक शराबी को शराब का एक के बाद दूसरा प्याला चढ़ाकर मिलता है। उन्माद की अवस्था उन्हें बहुत अच्छी लगती है, यद्यपि उनके पास पहले ही शेष सारे जीवन को इज्जत से निर्वाह करने के लिए काफी धन है, परन्तु वह उसके नशे को तोड़ नहीं सकते। यदि वह धन दौलत की सनक छोड़ दें, और अपने आत्मा की भलाई का फिक्र करें, तो वह अपने और दूसरों के लिए बहुत हितकर प्रमाणित हो सकते हैं। परन्तु वह तब तक ऐसा नहीं कर सकते, जब तक आपकी ज्योति और शक्ति उनके भीतर प्रवेश करने का अवसर पाकर इस अंग में भी उनके भीतर शुभ

परिवर्तन नहीं ला देती जैसा कि उनके जीवन के अन्य अंगों में उच्च परिवर्तन आया है।

वह आत्मा जो आपके देव प्रभावों के द्वारा इस धन-मोह से उद्धार पा चुके हैं। जानते हैं कि एक समय था जब वह इस भयानक उल्टी दृष्टि के शिकार थे।

एक बड़े खानदान का एक नौजवान ग्रेजुएट डाक्टर बनना चाहता था। जब उसे डाक्टर बनने का कारण पूछा गया, तो उसने कहा "इसलिए कि लोग मेरी एक मूर्ति नगर के एक गेट के नजदीक खड़ी करें।" उससे प्रश्न किया गया कि लोग तुम्हारा बुत्त क्यों बनाएं? उसने उत्तर दिया कि मैं लोगों की सेवा करूंगा और दान दूंगा।

यह उल्टी दृष्टि की एक विचित्र घटना है। वह लोगों में नाम पाने के लिए दूसरों की सेवा करना और धन कमाना चाहता था। जीवन के लक्ष्य के विषय में कैसी उल्टी दृष्टि।

परन्तु आपकी शक्ति ने उसे बदल दिया और उसने धन कमाने वाले सब काम छोड़ दिए और अब वह वर्षों से देव समाज में मिशनरी के रूप में काम कर रहा है।

इस अंग में मेरी अपनी उल्टी दृष्टि भी बड़ी सीमा तक दूर हो गई है। मैंने भी हर अच्छे या बुरे ढंग से धन इकट्ठा करना अपने जीवन का उद्देश्य बना लिया था, ताकि मैं ऊंचे सामाजिक सम्बन्ध और सांसारिक पदवी प्राप्त कर सकूं। जीवन के बारे में कैसा अन्धकार और कितना क्षुद्र लक्ष्य! आपने अपने देव प्रभाव संचार करके मेरी दृष्टि बदलने और मुझे बचाने की कृपा की।

आप की महान ज्योति में मैं देखता हूं कि मुझे उल्टी दृष्टि से बचाने के लिए आपकी देव ज्योति और आपके देव तेज से बढ़कर कोई चीज़ कारगर नहीं। दूसरे शब्दों में मेरी दृष्टि ठीक रखने के लिए आपके देव प्रभावों से बढ़कर किसी चीज़ पर भरोसा नहीं किया जा सकता। मुझे कड़वा तजरुबा है कि जब मैं अपने ऊपर निर्भर करता हूं तो मेरी दृष्टि उल्टी हो जाती है और मैं जीवन का उच्च मार्ग देखने के अयोग्य हो जाता हूं। उच्च जीवन के श्रेष्ठ मार्ग को देखने और उस पर चलने के बिना मैं सुरक्षित नहीं। मैं महसूस करता हूं कि जब मेरे हृदय पर आपका सबसे बढ़कर अधिकार होगा और केवल आपके देव रूप की ओर मेरा दिल आकृष्ट होगा, तब मेरी जीवन यात्रा सबसे बढ़कर सफल होगी।

काश! यह अति कंगाल और तुच्छ हृदय आपके अद्वितीय देव प्रभावों को ग्रहण करे और इस संसार के पतनकारी प्रभावों से अपनी रक्षा कर सके।

सूचना

धर्म जीवन सम्बंधी हर प्रकार की जानकारी के लिए, चंदा आदि भेजने , कोई मैटर आदि भेजने के लिए साथ लिखे पते पर सम्पर्क करें या लिखें। :-

श्रीमान बलदेव सिंह जी,
House No. 3154, Sector 21-D,
Chandigarh - 160 022
Phone : 0172 - 4638229, 2716914

मधुर स्मृतियाँ – 1

जीवन के बाईस पतझड़ पार करने के बाद वर्ष 1964 में मुझे बठिण्डा (पंजाब) के विभागीय तारघर में सर्विस करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। दफ्तर में कार्य करते हुए एक हफ्ता भी नहीं बीता था कि मैं शाम को बाजार में घूमने निकला। एक दीवार पर लिखी देववाणी "हे मनुष्य तू केवल शरीर ही नहीं बल्कि आत्मा भी है। केवल शारीरिक सुखों की तृप्ति में ही उम्र बर्बाद न कर।" ने अपनी ओर आकर्षिक करके मेरे चलते कदमों को रोक दिया। मैंने जेब से कागज व पैन निकाला और इस अमृतवाणी देववाणी को नोट किया। यह वाक्य मेरे हृदय में खुब गया। मैं इसे बार-बार पढ़ता और इस पर गम्भीरता से विचार करता रहा। अगले दिन इस देव वाणी को दफ्तर के एक दो जनों को भी पढ़कर सुनाया। डियूटी समाप्त करके शाम को मैं फिर उसी ओर से निकला जहां पर यह देववाणी अंकित थी। मेरे महा सौभाग्य कि उस देववाणी के पास ही श्री वेकंटेश्वर जी शर्मा मेज पर पुस्तकें बेच रहे थे। मैं उस ओर खिंच गया। किताबें देखने लगा। मुझे किताबें पसंद आईं। मैंने 2 या 3 पुस्तकें खरीद लीं। श्री शर्मा जी ने मुझे 5 या 6 किताबें और भी दी। मैंने वह भी खरीद लीं। बुक स्टाल के पास ही एक भीड़ थी जहाँ कुछ व्यक्ति श्रीमान बलदेव सिंह जी से बहस कर रहे थे मैं भी उसी भीड़ में चला गया। शाकाहार और माँसाहार पर बहस चल रही थी। मैं शाकाहारी था, इसलिए मुझे श्रीमान जी की दलीलें ठीक प्रतीत हुईं। श्रीमान शर्मा जी ने कहा कि आज रात को सभा होगी आप उसमें आईये। मैंने हाँ की। एक रेलवे के तारबाबू मेरे साथ रहते थे। मैं आग्रह करके उनको भी सभा में अपने साथ ले आया। सभा चल रही थी। श्रीमान बलदेव सिंह जी सभा करा रहे थे। नेबूला से लेकर पृथ्वी के विकास एवं देवात्मा के अद्वितीय आविर्भाव को सुनकर परम पूजनीय भगवान देवात्मा की पावन छवि को देखकर सभा की शालीनता एवं उच्च प्रभाव दायक वातावरण मेरे हृदय को उच्च खुशी प्रदान कर रहा था। अन्त में श्रीमान रूप चन्द जी भाव प्रकाश करने खड़े हुए। बोलते-बोलते उनकी आँखों में कृतज्ञता के आँसू थे। मैं भाव विभोर हो यह सब देख व सुनकर अपने को सौभाग्यशाली महसूस कर रहा था। कमरे पर जाकर मैंने महसूस किया की जिस चीज़ की मुझे तलाश थी वह मुझे मिल गई है। अगले रोज प्रात: की सभा में मैं फिर सम्मिलित हुआ। मेरा कमरे का साथी नहीं आया सभा सुनकर मैं दफ्तर में गया। दोपहर दफ्तर में से कुछ समय निकाल कर मैं पुन: मन्दिर में गया श्री शर्मा जी बर्तन साफ कर रहे थे। मुझे मन्दिर के साथ ही कमरे में बैठाया। श्रीमान बलदेव सिंह जी ने बाजार से मेरे लिए खरबूजा मंगवाया। मुझे खरबूजा खिलाया तथा कुछ देर बात चीत की। अगले महीने जून में मुझे सोलन पर्वत आश्रम पर सत्संग में पहुँचने के लिए कहा। शाम को मैं फिर मन्दिर में आया तथा श्री शर्मा जी को अपने कमरे पर ले जाने लगा। रास्ते में एक दुकान पर मैंने उन्हें कुछ ठंडी बोतल या लस्सी पिलानी चाही उन्होंने मेरे आग्रह को ठुकरा दिया। मेरे कमरे पर जाकर बैठने की बजाय हाथ में झाड़ू लेकर मेरे कमरे की सफाई की। बिस्तर ठीक किया। चीज़ें तरतीब से लगाईं। मैं शर्मिन्दा था। उनकी इस अनोखी सेवा से मैं प्रभावित था। बठिण्डा सत्संग

समाप्त हो गया। श्रीमान जी मोगा चले गए। मैं देव समाज की पुस्तकें पढ़कर धन्य - धन्य रहने लगा। एक मई से दस जुलाई 1964 तक (केवल दो माह दस दिन) मैं बठिण्डा तारघर में रहा। ग्यारह जुलाई 1964 को मैं केन्द्रीय अम्बाला छावनी में आ गया। अस्थाई नौकरी की व्यस्तता एवं परिवार को गाँव से शहर में लाने की व्यवस्था में कई माह बीत गए। श्रीमान बलदेव सिंह जी ने बठिण्डा तारघर से पता करके मुझे अम्बाला छावनी तारघर के पते पर चिट्ठी लिखी। चिट्ठी में लिखा था कि अम्बाला शहर में रेलवे स्टेशन के पास देवसमाज साधन मन्दिर है। वहाँ प्रत्येक रविवार प्रात: 8.30 बजे से सभा होती है। वहां जाया करो। चिट्ठी मिलते ही आने वाले रविवार को प्रात: मैं अपनी श्रीमति जी सहित प्रेमनगर से अम्बाला शहर देव समाज साधन मन्दिर में पहुँचा। श्रीमान जवाहर लाला जी सभा करा रहे थे। उनके सिर पर टोपी थी। बठिण्डा जैसा ही मन्दिर और परम पूजनीय भगवान देवात्मा की पावन छवि को देखकर में अत्यन्त खुश था। प्रत्येक रविवार प्रेमनगर से बस पकड़कर सभाओं में आने लगा। श्रीमान बलदेव सिंह जी के साथ पत्र व्यवहार चलता रहा। उनके पत्रों को पढ़कर उत्साह एवं खुशी महसूस करता। वे मुझे प्रेमनगर में तथा तारघर में मिलने आए। 1965 में हिन्दुस्तान पाकिस्तान युद्ध छिड़ गया। एक दिन मैंने अपनी आठ घंटे की डियूटी के अलावा ग्यारह घंटे का ओवर टाईम करके लगातार एक ही लाईन पर बिना कुछ खाये पिये 19 घंटे कार्य किया। अर्थात् दिन के ग्यारह बजे से अगली प्रात: 6 बजे तक लगातार कार्य किया। सुबह सात बजे घर पहुँचा। श्रीमति जी सारी रात बिना खाये - पिये इंतजार करती रहीं। मुझे उनका दुख व त्याग नजर न आया। उल्टा उन्हें ही बुरा भला कहा। प्राय: रात को एक या दो बजे छावनी से एक - दो साथियों के साथ प्रेमनगर पहुँचता। मकान मालकिन माता जी रात को उठकर दरवाजा खोलतीं। मेरी श्रीमति जी को अपनी बेटी व बहू की तरह रखतीं। जंग के दिनों में शाम होते ही सायरन बजने पर खाईयों में जा घुसते। एक दिन 4 - 5 माह की छोटी बिटिया (देव प्रीति) अन्दर मकान में ही रह गई। मकान मालकिन माता जी खाई से निकलकर अन्दर मकान से छोटी बच्ची को उठा कर लाईं। मकान नं 28 प्रेम नगर में मेरे पास ही म नं 279 प्रेमनगर में श्री सूरज भान जी जो आजकल हि० प्र० में गवर्नर हैं, बच्चों सहित रहते थे तथा P.M.G. आफिस अम्बाला छावनी में बाबू थे। श्री सूरज मान जी की सादगी एवं सज्जनता से मैं प्रभावित था। मेरे मकान मालिक श्री आनन्द स्वरूप जी शर्मा एयर फोर्स में अफसर थे। उन्होंने अपने बड़े पुत्र (जो एयर फोस में सर्विस पर थे) का विवाह मेरे गाँव की एक गरीब ब्राह्मण लड़की से बिना दहेज के विवाह सम्पन्न कराया। अपने सारे मकान की चाबियां मुझे देकर बच्चों सहित जम्मू चले गए। मैं ही उनके मकान में किरायेदार रखता और उन्हें किराया भेजता।

3 मार्च 1966 को मेरी पोस्टिंग धर्मशाला (कांगडा) के विभागीय तारघर में हुई। मैं परिवार सहित धर्मशाला पहुँचा। प्राकृतिक वातावरण एवं श्रीमान हंसराज जी डोगरा व उनके परिवार से मिलकर बड़ी खुशी मिली। नेचर ने मेरे भले का रास्ता खोल दिया। मैं देवसमाज की बातों का प्रचार करता। देवधर्म का साहित्य पढ़ता, भजन गाता, लेख लिखता, लम्बी सैर करता। अभी मैं सेवक भी नहीं बना था कि श्रीमान डोगरा साहब के परिवार में प्रत्येक रविवार शाम को सभा कराता। मुख्य चौराहों

पर वृक्षों पर देववाणी की प्लेटें लिखवाकर लगवाईं। कईयों से धूम्रपान छुड़वाता। दफ्तर में समय पर जाता। ईमानदारी से कार्य करता। श्रीमान प्रेमबल जी खेड़ा परिवार सहित धर्मशाला पधारे। माननीय बहन शशीबाला जी ने मेरी बेटी का नाम देव प्रीति सुझाया और उच्च लोकवासी श्रीमान प्रेमबल जी खेड़ा ने बेटी का नाम करण किया। मैंने 100 रू० दान दिया तथा पन्द्रह रूपए माहवार मोगा देवसमाज को दान भेजने लगा। श्रीमान बलदेव सिंह जी के पत्रों को पाकर मैं नया उत्साह व बल प्राप्त करता। अब जीवन में पतझड़ की बजाए बसन्त की बहार आने लगी। दिसम्बर 1966 का महोत्सव कब आए और कब मैं मोगा जाकर परम पूजनीय भगवान देवात्मा की सेवकी ग्रहण करने का सौभाग्य प्राप्त करूं। हृदय बल्लियों उछलने लगा। मेरी श्रद्धा बढ़ने लगी। आज मैं महसूस कर रहा हूं कि यदि मेरे उपकारी श्रीमान बलदेव सिंह जी मेरी बाँह पकड़ कर मुझे न सम्भालते तो शायद आज मैं क्या होता कहाँ होता? - - -

(क्रमशः)

के. एस. चौहान.

सहारनपुर

देवत्व और राक्षसत्व दोनों हमारे भीतर

मानव की महिमा इस बात में नहीं है कि वह कही गिरे नहीं, बल्कि इसमें है कि वह हर बार गिरने के बाद उठ खड़ा हो, संभले व सचेत हो जाए।

मानव - मन में हर तरह की प्रवृत्ति उपस्थित होती है। उसके भीतर जहां देवत्व होता है वहीं लगभग उसी अनुपात में राक्षसत्व भी होता है। प्रेम, क्रोध, करुणा, दया, लोभ, लालसा, आसक्ति और भक्ति सभी गुण विद्यमान रहते हैं। हमारे भीतर सभ्य व विकसित सोच है तो आदिम, पुरातन मानसिकता भी, परंपराओं में चलने की प्रवृत्ति है तो अन्वेषण की जिज्ञासा भी। हमारे भीतर छुपे हुए तत्वों में से जो उद्दीप्त होता है, वही हमारे व्यक्तित्व का प्रतिनिधित्व करता है।

किसी भी गुण के उद्दीपन के लिए जरूरी यह होता है कि हमारा आचार विचार क्या है, हमारा संस्कार क्या है। इसलिए यह अनिवार्य है कि हमारे अंदर जो जड़ता और बुराई है, उसके विरुद्ध संघर्ष जारी रखा जाए। समस्त शत्रु हमारे अंदर ही हैं। जो वृत्तियां हमें चरित्रभ्रष्टता के लिए बहकाती हैं, जो आग हमारे अंदर जलती है, वह सब अज्ञान एवं त्रुटि के उस अंत क्षेत्र से ही उठती हैं, जिसमें हम रहते हैं। हमारा पुरुषार्थ इसी बात पर है कि अंदर के राक्षसत्व को जितना जल्दी हो सके, परास्त कर दें।

मानव की महिमा इस बात में नहीं है कि वह कहीं गिरे नहीं, बल्कि इसमें है कि वह हर बार गिरने के बाद उठ खड़ा हो, संभले व सचेत हो जाए। यह ताकत आत्मविश्वास से आती है। धर्म विश्वास की वह शक्ति है जो आतंरिक भागों को स्वच्छ करता है। इसी कारण सच्चाई ही प्राथमिक धार्मिक सद्गुण है। धर्म मनुष्य के अंतर्जीवन की कला एवं उपपत्ति है। आत्मविजय लालसा से शांति तक पहुंचने का ही मार्ग है। किसी मनुष्य की साधुता की मात्रा का परीक्षण इस बात से होता है कि वह किस सीमा तक अपनी प्रकृति की दुर्बलताओं पर प्रभुत्व पाने में समर्थ हुआ है।

डा. राधाकृष्णन

धार्मिक दंगे

क्या बंदूकों से विभिन्न धार्मिक संप्रदायों के बीच वैमनस्य की खाई पाटी जा सकती है?

आज तमाम देशवासी धार्मिक उन्माद में अंधे हो कर देश को बरबाद करने पर तुले हुए हैं, और स्वयं सरकार भी जब धर्म निरपेक्षता का खोखला आदर्श ओढ़े उन्हें सहयोग दे रही है तो ऐसे में राष्ट्र को इस तबाही से बचाने का कौन सा रास्ता शेष रह जाता है?

धार्मिक उन्माद दंगों का रूप क्यों ले लेता है? क्यों लोग एक दूसरे को मारने मरने पर उतारू हो जाते हैं? विवाद चाहे राम जन्म भूमि अथवा बाबरी मस्जिद को ले कर हो या कहानी के किसी ऐसे शीर्षक पर जिस के एक पात्र का नाम भी संयोगवश वही हो जो करोड़ो व्यक्तियों द्वारा माने जाने वाले धर्म के प्रवर्तक का। धार्मिक उन्माद में बह जाने वालों का एक ही लक्ष्य होता है - विधर्मियों को मार डालो और जरूरत पड़े तो खुद भी धर्म के नाम पर 'शहीद' हो जाओ।

शुरुआत अंग्रेजी शासन में :-

ये खूनखराबा और धार्मिक दंगे केवल अब ही हो रहे हों, ऐसी बात नहीं है, ये तो तभी से हो रहे हैं, जब हम अंग्रेजों के गुलाम थे। मगर अंग्रेजों से पहले नहीं होते थे। इस का मुख्य कारण यह था कि तब इस देश के अधिकतर भाग पर मुगलों या अन्य मुसलिम शासकों का राज था और किसी में इतनी हिम्मत नहीं थी कि वे मुसलमानों से मुकाबला कर सकते। अगर कोई ऐसा करने का साहस करता भी था तो उसे फौरन दबा दिया जाता था। तब हम शरीर से मुसलिम बादशाहों के दास थे तो मानसिक रूप में धर्म की कपोलकल्पित, पाखंडपूर्ण बातों के। दूसरे अर्थों में तब हम पर धर्म के धंधेबाज भी अपना शासन कर रहे थे।

यों तो भारत का इतिहास इस तथ्य का गवाह है कि यहां पर धार्मिक दंगों और मजहब के नाम पर मारकाट की घटनाओं की कोई कमी नहीं रही है। 1947 में धर्म के नाम पर देश के विभाजन के बाद तो इन में बढ़ोतरी ही हुई है, अब तो ये दंगे इतना उग्र रूप धारण कर लेते हैं कि पुलिस भी इन पर काबू नहीं कर पाती। इन्हें नियंत्रण में लाने के लिए प्रशासन को सेना बुलानी पड़ती है और कर्फ्यू लगाना पड़ता है, फिर भी ये दंगे समाप्त नहीं हो पाते। अगर शहर के एक कोने में कुछ शांति कायम होती है तो अवसर मिलते ही दूसरे कोने में अशांति उत्पन्न हो जाती है।

कुछ भी हो, इन धार्मिक लड़ाईझगड़ों और दंगों ने सर मुहम्मद इकबाल के इस कथन को झुठला दिया है कि "मजहब नहीं सिखाता है आप में बैर रखना।" सच बात तो यह है कि थोड़े-थोड़े समय के पश्चात बार-बार भड़कने वाले इन दंगों ने इस बात की पुष्टि कर दी है कि धर्म के कारण ही मनुष्य-मनुष्य का जानी दुश्मन बन जाता है। वह एक दूसरे को जान से मारने और खून बहाने पर उतारू हो जाता है।

नहीं तो क्या वजह है कि एक ही वातावरण में रहने वाले, प्रायः एक जैसा भोजन करने वाले और एक से वस्त्र पहनने वाले लोगों में इतना तीव्र विरोध और अलगाव क्यों है? इस का एकमात्र कारण है धर्म और उस के कारण उत्पन्न अलगाववादी

मान्यताएं।

हिन्दू, मुसलिम, सिख और ईसाई सब का यह कहना है कि सभी धर्म आपसी प्रेम और भाईचारे पर ही बल देते हैं, परन्तु यदि गौर से देखा जाए तो सभी धर्मों के ये लुभावने नारे केवल अपने ही धर्म के मानने वालों के लिए होते हैं। जो जिस धर्म को मानता है उसकी दृष्टि में तो दूसरा धर्म और उस की सभी बातें मिथ्या, बेबुनियाद हैं, और उस के मानने वाले पाखंडी, काफिर, पथभ्रष्ट तथा नास्तिक।

इसी कारण किसी भी धर्म के अनुयायी की सदैव यही चेष्टा रहती है कि जैसे भी हो, दूसरे धर्म के मानने वाले पथभ्रष्ट इन्सान को खुदा, भगवान, गॉड के नाम से जबरन अपने धार्मिक खेमे में घसीटा जाए, चाहे इस के लिए कितनी तलवारबाजी क्यों न करनी पड़े, कितना भी खूनखराबा क्यों न हो, ऐसा करना इन लोगों की नजरों में 'पुण्य' कमाना है।

धार्मिक प्रवृति के लोग यह दलील देते हैं कि धर्म ही मनुष्यों में सहयोग, सद्भाव और उदारता को जन्म देता है, जब कि असलियत यह है कि ये सब बातें मात्र एक छल और दिखावा है। इस के विपरीत धर्म ने धार्मिक मनुष्य में सदैव संकीर्णता, कट्टरता, स्वार्थ, लोलुपता उत्पन्न करने के साथ-साथ रूढ़िवादी परम्पराओं पर मरने मिटने वाला ही बनाया है।

इतिहास इस बात का साक्षी है कि आज तक संसार में जितने अधिक दंगे, लड़ाईयां, युद्ध, हत्याएं, उत्पीड़न, मारामारी और अत्याचार की घटनाएं धर्म के नाम पर हुई हैं उतनी अन्य किसी कारण से नहीं, यहां तक कि राजगद्दी को हथियाने के लिए भी इतने अधिक लड़ाई-झगड़े नहीं हुए हैं। इतिहास बार-बार इस सत्यता को उजागर करता है कि एक धार्मिक गुट या समुदाय ने अवसर मिलते ही दूसरे धर्म वालों को मारा या फिर बरबाद ही कर दिया। इस में मरने या बरबाद होने वाले का दोष केवल इतना ही था कि वह आक्रांता के धर्म को मानने वाला नहीं था।

धार्मिक उन्माद :-

अफसोस की बात यह है कि सन 1947 में राजनीतिक दासता की जंजीरों से मुक्त होने के पश्चात इस देश ने जिस क्षेत्र में सब से अधिक उन्नति की है वह है धर्म का क्षेत्र, जिसे धर्म के धंधेबाजों ने अपना उल्लू सीधा करने के लिए अधिकाधिक बढ़ावा दिया। मगर उन के पाखंड को राजनितिबाजों से भी खूब प्रोत्साहन मिला, क्योंकि सांप्रदायिकता, जातपात पर आधारित इस देश में यह धार्मिक उन्माद उन के लिए वरदान ही सिद्ध हुआ।

सारे संसार में धार्मिक उन्माद में कैसे-कैसे पाश्विक अत्याचार हुए हैं, इन तथ्यों से इतिहास के पन्ने भरे पड़े हैं। फिर भी यदि हम इतिहास की उन घटनाओं को छोड़ अपने देश के ही हाल के दंगों और हत्याकंडों पर दृष्टिपात करें तो हमारे सिर शर्म और लज्जा से झुक जाने चाहिए। हिंदू, मुसलिम दंगे तो इस देश के लिए अभिशाप थे ही, परन्तु अब तो पिछले 3-4 वर्षों से पंजाब में हो रही घटनाएं। धार्मिक उन्माद का निकृष्टतम उदाहरण हैं। वहां जो कुछ हो रहा है क्या वह सब धर्म के अतिरिक्त किसी और वजह से है?

असल में विवादों ने जब भी झगड़ों का रूप लिया तो वह हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच ही था। मिजोरम और नागालैंड के आदिवासी ईसाई भी आए दिन हिन्दुओं से जूझते रहते हैं, और अपनी

अलगाववादी गतिविधियों में सक्रिय हैं। देश के मध्य भाग में तो हिन्दू और मुसलमान एक दूसरे को तबाह करने पर तुले ही रहते हैं। इस के साथ-साथ पड़ोसी देश श्रीलंका में भी हिन्दुओं और बौद्धों के मध्य मारकाट मची हुई है।

मई 1984 में महाराष्ट्र के भिवंडी क्षेत्र में धार्मिक उन्माद के फलस्वरूप मारकाट, हत्याओं और आगजनी का जो तांडव हुआ था, उसे शायद ही कोई आज तक भूल पाया होगा। तब इन धार्मिक दंगों में लगभग 300 आदमी मार डाले गए थे। लाखोंकरोड़ों की संपत्ति आग में जल कर राख हो गई थी और लगभग 2 सप्ताह तक सारा उद्योग व्यापार पूरी तरह ठप पड़ गया था। सब से अधिक वीभत्सता तो उस समय देखने में आई थी, जब इन दंगों में एक संप्रदाय के लोगों ने दूसरे संप्रदाय के 20 लोगों को जिंदा ही जला दिया था।

ज्यादा दूर क्यों जाएं, अभी हाल में दिल्ली, लखनऊ, सीहोर, मेरठ, हैदराबाद आदि में अयोध्या की राम जन्म भूमि एवं बाबरी मस्जिद के विवाद को ले कर ऐसे ही दंगे भड़क उठे थे। तब भी यही लगा था कि हजारों की तादाद में निर्दोष व्यक्तियों को भगवान और अल्लाह की खातिर एकदम 'स्वर्ग' अथवा 'जन्नत' तक पहुंचा दिया जाएगा। पर ऐन वक्त पर वहाँ भी बंदूकों के दम पर शांति कायम की जा सकी थी।

इन धार्मिक दंगों को भड़काने के लिए प्रायः मन्दिर में कहीं गो मांस फेंक दिया जाता है तो मस्जिद में सूअर का मांस या फिर सूअर का ही प्रवेश करा दिया जाता है। या फिर गुरुद्वारों में तंबाकू और सिगरेटें डाल दी जाती हैं। इतना होते ही विभिन्न संप्रदायों के लोगों में मारामारी आरंभ हो जाती है। इस से साबित होता है कि धर्म ने मनुष्य को सभ्य और बुद्धिमान बनाने के स्थान पर उसे मूर्ख, असभ्य और गंवार ही बना कर छोड़ा है। यह हमारे लिए एक कलंक की बात है कि आजादी के 50 वर्षों के पश्चात भी अशिक्षित धर्म के धंधेबाजों द्वारा अमानवीय और अत्याचारी बनाया जा रहा है।

सरकार की निष्क्रियता :-

कुछ बुद्धिजीवी वर्गों का कहना है कि धार्मिक उन्माद के फलस्वरूप होने वाली मारकाट का एक बड़ा कारण सरकार और पुलिस की निष्क्रियता, उपेक्षा एवं इस स्थिति की ओर से आंखें मूंद लेना है। यदि सरकार ऐसे मामलों में कड़े कदम उठाए और सख्ती दिखाए तो ये दंगेफसाद हो ही नहीं सकते। पर वास्तविकता यह है कि दो विभिन्न धर्मों के अनुयायियों में एक दूसरे के प्रति इस कदर वैमनस्य भरा होता है कि इन्हें बस हवा देने भर की जरूरत होती है और गड़बड़ शुरू हो जाती है।

फिर पुलिस या सरकार इस ओर से क्यों न अपनी आंखें मूंद ले? आखिरकार पुलिस और सरकार में भी तो हिंदू, सिख और मुसलमान ही होते हैं, वे क्यों अपने ही समाज और संप्रदाय से अलग हो कर चलेंगे।

यह और बात है कि नौकरी और ड्यूटी के नाम पर वे थोड़ा सक्रिय हो जाएं, पर मुख्य समस्या तो उन के सामने अपनी जाति व धर्म को प्रत्यक्ष/अप्रत्यक्ष रूप से समर्थन देने की रहती है।

इसी वजह से आज धार्मिक दंगों पर काबू पाने के लिए सरकार को सेना की आवश्यकता पड़ने लगी है, पर अब तो सेना में भी धार्मिक उन्माद और विद्रोह के चिन्ह् दृष्टिगत होले लगे हैं। अमृतसर में सैनिक कारवाई के दौरान धार्मिक उन्माद के कारण सेना के सिख सैनिकों का पलायन तथा सिख सैनिकों द्वारा अपने ही कमांडर की हत्या

और बगावत पिछले दिनों के ज्वलंत उदाहरण हैं।

सही बात तो यह है कि देश में धर्म और उस के धंधेबाजों को जब तक जनमानस और सरकार दोनों का समर्थन एवं स्वीकृति मिलनी बंद नहीं होगी, तब तक ये धार्मिक दंगेफसाद मारकाट बंद नहीं हो सकते।

धार्मिकता पर प्रतिबंध

यह ठीक है कि बंदूकों के बल पर इन धार्मिक दंगों को तत्काल दबाया तो जा सकता है, परन्तु समाप्त नहीं किया जा सकता। यह सोचने की बात है कि ऐसा कब तक चलेगा? फिर इन बंदूकों से क्या विभिन्न धार्मिक संप्रदायों के बीच वैमनस्य की खाई पाटी जा सकती है? सच तो यह है कि पुलिस या सैनिकों के भय से लोग शांत तो पड़ सकते हैं, परन्तु अपने दिलों में जमे वैर को नहीं धो सकते।

जब तक हर रोज न केवल लोगों द्वारा बल्कि सरकार द्वारा भी यह बताया जाता रहेगा कि यह हिन्दू है, यह मुसलमान है, यह सिख है, यह ईसाई है, तब तक मनुष्य अपने मन में जमी वैमनस्य, वैर, घृणा और अलगाव की भावनाओं को नहीं बदल सकता।

जब तक धार्मिकता पर रोक नहीं लगेगी, उसे कमजोर नहीं किया जाएगा और जब तक धार्मिक नारों से इस देश की हर सड़क और गली गूंजती रहेगी, तब तक मनुष्य अपने ही देशवासियों का गला काटना नहीं छोड़ेगा। इस देश में पूरी तरह अमनचैन तब तक कायम नहीं हो सकता जब तक स्वयं सरकार अपना धर्म निरपेक्षता का आदर्श त्याग कर खुद धर्म की आलोचना करना नहीं सीखेगी।

योग्यता के आड़े दुराग्रह न आए

हम सीखी हुई आदतों व आनुवंशिकता के शिशु हैं जो मनुष्य को उसी रूप में ढालती हैं जैसे वे होते हैं और हमेशा रहेंगे।

आपको कोई पसंद करे या नफरत, पर किसी योग्य व्यक्ति के चयन में यह आधार आड़े नहीं आना चाहिए यह समझ लेना चाहिए कि शत्रु भी उसी काम को अच्छी तरह कर सकता हैं। दुर्व्यवहार का दोषी है परन्तु वह उस पद के लिए सबसे योग्य व्यक्ति है तो अगर कोई आदमी आलोचना करता है या व्यक्तिगत उसे वह पद उतनी ही तत्परता से दे देना चाहिए जितनी तत्परता से आप अपने किसी मित्र को दे सकते हैं। सुलझे हुए प्रशासक किसी आदमी को सिर्फ इसलिए नहीं हटाते क्योंकि वह उनका शत्रु है या वे उसे पसंद नहीं करते।

किसी भी आदमी के काम के लिए उसका गुणगान नहीं करना चाहिए, न ही उसके किसी काम को करने या न करने के लिए उसकी ज्यादा आलोचना करना चाहिए, क्योंकि हम सभी स्थितियों, परिस्थितियों, माहौल, शिक्षा, सीखी हुई आदतों व आनुवंशिकता के शिशु हैं जो मनुष्य को उसी रूप में ढालती हैं जैसे वे होते हैं और हमेशा रहेंगे।

अगर आप में व मुझ में वही शारीरिक, मानसिक तथा भावनात्मक लक्षण होते जो हमारे शत्रुओं को विरासत में मिले हैं और अगर जीवन ने हमारे साथ वही किया होता जो उनके साथ किया है, तो हम बिलकुल उसी तरह व्यवहार करते जैसा वे करते हैं। हम शायद कुछ और कर ही नहीं सकते थे। हमें इतना उदार होना चाहिए कि हम अपने शत्रुओं से नफरत करने के बजाय उन पर दया करें और ईश्वर को धन्यवाद दें कि जीवन ने हमें उनकी तरह नहीं बनाया। अपने शत्रुओं पर आलोचना और प्रतिशोध की बारिश करने के बजाय हम उन्हें अपनी समझ, अपनी सहानुभूति, अपनी सहायता, क्षमा और प्रार्थनाएं दें।

– हर्नडन

प्रतियोगी नहीं पूरक हैं।

इसमें सन्देह नहीं कि आज भी स्त्री जाति प्रताड़ित है। बच्चों को जन्म लेने से पहले ही मार देना, अभी कई स्थानों पर छोटी उमर में शादी करके माता पिता मानो अपने कन्धों से एक बोझ उठा समझते हैं। अभी भी बहुत सी लड़कियां दहेज की बलि चढ़ जाती हैं। कितनी पत्नियां पतियों के दुर्व्यवहार उनकी बेवफाई से नर्क का जीवन व्यतीत करती हैं।

परन्तु जीवन का यही पहलु नहीं है। स्त्री जाति के लिए पुरुषों का स्थान बहुत सी सूरतों में सम्माननीय भी है। परन्तु हमारी समाज में जब भी नारी उत्थान का ज़िकर आता है, तो पुरुषों को एक राक्षस के रुप में ही प्रस्तुत किया जाता है। आज नारी हर क्षेत्र में आगे बढ़ रही है, तो यह बहुत सीमा तक बगावत से नहीं बल्कि पुरुषों की सकारात्मक सोच की सहायता भी कारण है। पिता, भाई वा पति के रूप में पुरुषों ने स्त्रियों को आगे बढ़ने में सहायता दी है, और समाज में उन्हें सम्मानजनक स्थान दिलाया है। अकसर देखा जाता है कि बेटा ज्यादा मां के निकट होता है, तो पिता बेटी से अधिक स्नेह करता है। आधुनिक युग में थोड़े भी समझदार माता पिता बेटी को भी पढ़ाने वा आगे बढ़ाने के लिए उतना ही संग्राम करते हैं, जितना बेटों के लिए। प्राचीन सामंतवादी समाज में भी स्त्री विदुषी हुई हैं, उन्हें पतियों के साथ बैठने वा राजनीति में भी अकसर भागीदार बनाया जाता रहा है।

यदि गंभीरता से देखा जाए तो पुरुष और स्त्री एक दूसरे के पूरक हैं। शारीरिक रूप से पुरुषो की अपेक्षा निर्बल होने के कारण वह पति का साथ पाकर सबल बन जाती है। स्त्री का भावात्मक साथ पाकर पुरुष भी कठोरता के साथ कोमलता प्राप्त करता है।

जो पुरुष स्त्रियों को प्रताड़ित करते हैं, उनका स्वभाव प्रत्येक रिश्ते में ही ऐसा होता है, वह प्रत्येक कमज़ोर स्त्री पुरुषों के सम्बन्ध में समान रूप ही सन्तप्त करने वाले होते हैं। यही हाल नारी के सम्बन्ध में कहा जा सकता है। कई स्त्रियों के हाथों पति ही दुखी नहीं होते वह और सम्बन्धों में भी दुखदाई व्यवहार देती हैं। स्वार्थ, अंहकार, ईर्षा, द्वेष, मान प्रशंसा का अधिकार किसी स्त्री वा पुरुष पर जितना अधिक होगा, उतना ही वह दूसरों के सम्बन्ध में सताने वाले होते हैं। यह अलग बात है कि पुरुषों में यह संख्या अधिक हो सकती है। स्त्रियों का अंह अधिकतर स्त्रियों के साथ ही टकराता है। सास - बहु, नन्द - भाभी के झगड़ों के बहुत उदाहरण मिल जाएंगे।

आज नारी उत्थान की जितनी भी संस्थाएं चल रही हैं, उनमें उत्थान कम नज़र आता है, स्त्रियों के भीतर स्वच्छन्दता का अलग ही रूप प्रगट किया जा रहा है। इससे परिवार बिखर रहे हैं। पहनावे की मर्यादाएं समाप्त हो रही हैं। खुले विचार वा पहनावे में इतनी आज़ादी कि पुरुषों की नीच भावनाओं को भड़काने में नारी का शक्तिमय रूप भी कहीं दिखाई नहीं देता। उतेजक हाव - भाव दिखाना स्टेज पर मर्यादा रहित व्यवहार करना, पुरुषों द्वारा

ब्यूटीफुल वा सैक्सी कहलाने में न केवल कोई झिझक नहीं, बल्कि उन्हें Compliment समझना सभ्यता में शामिल हो गया है। स्त्री स्वयं ही अपने आपको भोग की वस्तु प्रस्तुत करने पर ही तुल जाए तो पुरुषों का भी क्या दोष?

आवश्यकता है कि हम अपनी बेटियों वा बहनों को आधुनिकता के साथ संयमित व्यवहार बचपन से सिखाने की कोशिश करें बेशक वातावरण की हवा शक्तिशाली है। परन्तु अपनी मर्यादाएं हमें स्वयं तय करनी हैं यदि समाज वा परिवार को बचाना है। इसमें नारी और पुरुष दोनों ही अपनी सीमाओं को तय करें।

सुरजीत बराड़

व्यक्तित्व की मजबूत नींव है ईमानदारी

जब आप कोई नैतिक सिद्धांत तोड़ते हैं, तो आप ईमानदारी की नींव में छोटी सी दरार बना लेते हैं।

यद्यपि जीवन के हर क्षेत्र में ईमानदारी बड़े काम की चीज है, परन्तु आप जब प्रतिभाशाली बनना चाहते हैं, तो यह और भी अधिक महत्त्वपूर्ण बन जाती है। यह वह नींव है, जिस पर कई अन्य गुण स्थापित किए जाते हैं, जैसे सम्मान, प्रतिष्ठा और विश्वास। अगर ईमानदारी की नींव कमजोर या दोषपूर्ण है, तो प्रभावशाली व्यक्ति बनना असंभव हो जाता है। जो लोग कुछ समय तक ईमानदारी की कमी छुपाने में सफल होते है, उन्हें भी अंततः असफलता ही हाथ लगेगी और उन्होंने अस्थायी तौर पर जो प्रभाव हासिल किया है, वह भी खत्म हो जाएगा।

ईमानदारी के लाभों के बारे में उसी तरह सोचें, जिस तरह भयानक तूफान के समय आप किसी मकान की नींव के बारे में सोचते हैं। अगर नींव मजबूत है, तो मकान गरजते पानी का डटकर मुकाबला करेगा। परन्तु अगर नींव में दरारें हैं, तो तूफान का दबाव इन दरारों को और गहरा बना देगा तथा अंततः दबाव की वजह से नींव और उसके साथ ही पूरा मकान धराशायी हो जाएगा।

ईमानदारी की परिभाषा नैतिक चरित्र का पालन, नैतिक चरित्र की मजबूती है। नैतिक सिद्धांत लचीले नहीं होते। छोटा सफेद झूठ भी झूठ ही होता है। चोरी तो चोरी ही है चाहे एक रुपए की हो या एक लाख रुपए की। ईमानदारी में यह संकल्प होता है कि व्यक्तिगत लाभ की बजाय चरित्र, वस्तुओं की बजाय लोग, शक्ति के बजाय सेवा, सुविधा के बजाय सिद्धांत और तात्कालिक दृष्टिकोण की बजाय दूरगामी दृष्टिकोण अधिक महत्त्वपूर्ण होता है। जब आप कोई नैतिक सिद्धांत तोड़ते हैं, तो आप ईमानदारी की नींव में छोटी सी दरार बना लेते हैं। और जब मुश्किल समय आता है तो ईमानदारी से काम करना अधिक आसान होने की बजाय अधिक मुश्किल हो जाता है।

जीवन प्रसंग

आत्मा का सौंदर्य

एक राजकुमार को अपने सौंदर्य पर गर्व था। प्राय: सोचा करता था कि उसके जैसा सुन्दर व तेजस्वी शरीर शायद ही किसी और का हो। युवराज एक दिन राज्य के मंत्री के पुत्र के साथ भ्रमण के लिए निकला। भ्रमण करते-करते दोनों नदी के तट पर जा पहुंचे। नदी के तट पर स्थित श्मशान में कुछ लोगों की भीड़ देखकर युवराज ने पूछा, यहां खड़े लोग क्या कर रहे हैं? मंत्री पुत्र ने उत्तर दिया, नगर का कोई व्यक्ति मर गया है। ये उसके शव का दाह-संस्कार करने आए हैं।'

शायद वह व्यक्ति कुरूप होगा, इसीलिए उसका शव जलाने आए होंगे। सुन्दर व्यक्ति होता तो शरीर को क्यों नष्ट करते?

मंत्री पुत्र ने कहा, युवराज शरीर कितना ही सुन्दर व दर्शनीय क्यों न हो, उसका तब तक महत्त्व है जब तक उसमें प्राण है। प्राण मुक्त होते ही शव को जला डालने की जल्दी होती है। मुरदे को घर में रखना कोई पसन्द नहीं करता। दोनों टहलते हुए श्मशान पहुंचे। युवराज ने शव पर निगाह डाली तो उसकी आकृति आकर्ष व सुन्दर थी। युवराज का अपने सौन्दर्य का गर्व चूर-चूर हो गया। वह अपने राजगुरू जी के पास पहुंचे। उनसे पूछा, 'क्या प्राणहीन शव को जलाया जाना जरुरी है? परमाचार्य ने कहा, प्राणहीन शरीर में से कुछ ही घंटे बाद दुर्गंध आने लगती है। महत्त्व शरीर का नहीं, आत्मा का है।

मानव को शारीरिक सौंदर्य पर नहीं, आत्मा व आचरण पर गर्व करना चाहिए।

मालिक या गुलाम

संत वाजिद अपने उपदेश में कहा करते थे कि, सबकी मालिक प्रकृति (नेचर) है। परिस्थितवश कोई मालिक दिखाई देता है तो कोई गुलाम। किन्तु सभी एक दूसरे के गुलाम हैं।

एक दिन संत वाजिद अपने शिष्यों के साथ कहीं जा रहे थे। उन्होंने देखा कि एक आदमी गाय के गले में रस्सी बांधकर उसे घसीटते हुए ले जा रहा है। वाजिद ने शिष्यों से पूछा इसमें कौन मालिक है और कौन गुलाम? शिष्यों ने कहां, जो आदमी गाय को घसीटते ले जा रहा है, वह मालिक है और गाय उसकी गुलाम है। वाजिद हंस कर बोले, जिस आदमी को तुम मालिक समझ रहे हो, वह गुलाम है। देखते ही देखते वाजिद ने जेब से चाकू निकाला और गाय के गले में पड़ी रस्सी का छोर काट दिया। रस्सी कटते ही गाय भागने लगी। अब वह आदमी गाय के पीछे-पीछे दौड़ने लगा। वह वाजिद को गाली देता जा रहा था, इस पागल फकीर ने रस्सी काट डाली। मेरी गाय भाग निकली। अरे कोई दौड़ो पकड़ो। तुम सबकी मेहरबानी होगी। अंहकार के कारण वह अपने को गाय का मालिक समझ रहा था, अब गुलाम की तरह गाय के पीछे भाग रहा है। शिष्य समझ गए कि वास्तव में कोई किसी का मालिक नहीं होता।

पाठकों के विचार

एक सेवक लिखते हैं :-

1 धर्म जीवन अप्रैल 2007 को अभी अभी पढ़ा है। पढ़कर देव प्रभावों के छींटे हृदय पर पड़े। सभी लेख प्रेरणादायक हैं। कल्याण सत्संग के भाव प्रकाश दिल को छूने वाले हैं। आप वा श्रीमान बलबहादुर सिंह जी विशेष संग्राम कर रहे हैं। दिल करता है कि आपकी सभाएं सुनकर कुछ ऊर्जा प्राप्त करूं। पदों से दूर रहकर आपने अपना वा औरों का विशेष भला किया है। काश! मैं आपसे और आपके साथ प्रचार में रहकर अपने आत्मा का अधिक भला करता तथा अपने परिवार का भला करता। जब तक आपके साथ रहा तब तक परिवार का एवं भाई साहिब जी आदि का अधिक भला होता रहा। मैं आपकी दीर्घायु की मंगल कामना एवं धन्यवाद करता हूं।

एक सेवका लिखती हैं :-

आप द्वारा भेजी गई दोनों पत्रिकाएं मुझे मिल रही हैं। इनमें आप द्वारा और आदरणीय सुरजीत जी द्वारा लिखित लेख भगवान देवात्मा के उच्च प्रभाव पहुंचाने में विशेष कार्य कर रहे हैं। फरवरी माह की दोनों पत्रिकाओं के लेख मुझे विशेष महसूस हुए। परन्तु Nature bound है, नेचर पर विश्वास करके तो देखें, परन्तु मनुष्य प्रकृति की कोई पेश नहीं जाती। बाकी सभी लेख भी बार-बार पढ़कर हृदय में उतारने वाले हैं। मैं नेचर की सहायकारी शक्तियों पर अपना विश्वास बढ़ाने की चेष्टा करूंगी।

महोत्सव पर आप सब को मिलकर, विशेष कर आपके बड़े बहन जी को मिलकर बहुत खुशी हुई। अब जब सब धर्म सम्बन्धियों को मिलने का अवसर नहीं मिलता, तो इस कमी को मैं भी और अन्य धर्म सम्बन्धी भी महसूस करते हैं। आदरणीय सुरजीत जी को सत्य देव की जय उनकी सेवा के लिए धन्यवाद।

श्रीमान बलदेव सिंह जी, एम. ए। (लाईफ़ वर्कर) मंत्री-देव-धर्म-मिशन। प्रिंटर, पब्लिशर और मालिक "धर्म जीवन" ने ***Surya Laser Den, # 68, Shop No. 3, Badheri 41-D, Chandigarh*** *से छपवाकर म. न. 3154, सैक्टर 21-डी, चण्डीगढ़ से प्रकाशित किया।*

Book Posts